रोज़े के इन्फ़ेरादी और इज्तेमाई फ़ायदे

क़ाएदे मिल्लत मौलाना सै० कल्बे जवाद नक़वी, जनरल सेक्रेट्री मजलिस उलमा-ए-हिन्द
अनुवादः सैय्यद सुफ़यान अहमद नदवी

(1)

इस हक़ीक़त को सभी जानते हैं कि लोगों से ही समाज बनता है और अगर लोग सही हों तो समाज अपने आप नेक बन सकता है। अब हमें ये देखना है कि लोगों की ख़राबियों की बुनियादी वजह क्या है? जिनके असर से समाज में तबाही और बरबादी और बुराई व फ़साद फैल जाता है। कुरआन मजीद के हिसाब से भी, हदीसों की रौशनी में भी और समझदारों और पढ़ेलिखों की बातों की बुनियाद पर भी ये बात साबित है कि किसी शख़्स की ख़राबियों की बुनियादी वजह खुद उसका नफ़्स है। इंसान के नफ़्स की इतनी अहमियत है कि खुदावन्दे आलम ने ग्यारह क़समों के बाद इंसानी क़सम खाई हैः ''सूरज और उसकी रौशनी की क़सम, चाँद की क़सम जब वह उसके पीछे चले और दिन की क़सम जब वह रौशनी बख़्शे और रात की क़सम जब वह उसे ढांप ले और आसमान की क़सम और जिसने उसे बनाया और ज़मीन की क़सम और जिसने उसे बिछाया है और नफ़्स की क़सम और जिसने उसे ठीक किया है।'' (सूरए वश्शम्स) पहले पूरी काएनात की क़सम खाई फिर इंसान के नफ़्स की यानी एक पल्ले में पूरी काएनात है तो दूसरे में इंसान का नफ़्स। इसके बाद कुरआन मजीद ने फैसला सुनायाः ''बेशक वह कामयाब हो गया, जिसने नफ़्स को पाक बना लिया और वह नाकाम हो गया, जिसने उसे गंदा कर दिया'' (सूरए वश्शम्स) कुरआन मजीद के मेयार के मुताबिक़ कामयाब सिर्फ़ वह है, जिसने अपने नफ़्स को पाक व पाकीज़ा रखा और नामुराद वह है, जिसने अपने नफ़्स को बर्बाद कर दिया। इंसान को जो भी बड़ाईयाँ और बुलन्दियाँ हासिल हैं वह जिस्म और उसकी बनावट की बुनियाद पर नहीं, उसके माद्दे की वजह से नहीं, बल्कि उस जिस्म के क़िले में हुकूमत करने वाले बादशाह नफ़्स की वजह से हैं। अगर हम ने अपने इस नफ़्स से सही तरीक़े से काम लिया तो कामयाब हैं और जिसने नफ़्स की ख़ूबियों को बरबाद कर दिया, वही नाकाम और नामुराद है। कुरआन एलान फ़रमा रहा है (मतलब)ः दुनिया के हिसाब से तुम चाहे कितने ही ऊँचे दर्जे पर पहुँच जाओ, जिसमानी हिसाब से चाहे जितने ही आराम से क्यों न हो, तुम्हारे जिस्म की हर तरह की चाहत क्यों न पूरी हो रही हो तो ये हरगिज़ कामयाबी नहीं है। हर बुलन्दी के बाद तुम नीचे ही हो और हर इज़्ज़त के बाद भी ज़लील और हर तमन्ना की मुराद पूरी होने के बाद भी नामुराद हो, बल्कि कामयाब वह है जिसने अपने नफ़्स को अपने कंट्रोल में रखा और उसे गंदा होने से बचा लिया।

इंसान की बड़ाई जिस्म से नहीं, उसकी ज़ाहिर और जिस्मानी ख़ूबसूरती से नहीं, बल्कि नफ़्स और उसकी अंदुरूनी ख़ूबसूरती की वजह से है। अबूलहब बहुत सुर्ख़ व सफ़ेद था। इसी वजह से अबूलहब पुकारा जाने लगा (लहब के माने आग के अंगारे के हैं) रसूल[स०]

का सगा चचा था, हाशमी था, मुत्तलबी था, मगर नफ़्स ख़राब और गंदा था, इसी लिए क़ुरआन में नाज़िल हुआः ''अबू लहब के हाथ टूट जाएं और वह हलाक हो जाए'' (सूरए लहब)। हज़रत बिलाल काले हैं, हबशी हैं, गुलाम हैं, मगर पहली अज़ान के लिए उन्हें ही चुना गया है। काबे की छत पर गए और इस्लाम की पहली अज़ान दी और मशहूर है कि जब तक अज़ान न देते थे सहर न होती थी। लोगों ने आकर कहा ऐ अल्लाह के रसूल[स॰] बिलाल 'शीन' को सही तरह अदा नहीं कर पाते। बजाए 'शीन' के 'सीन' कहते हैं। अल्लाह के रसूल[स॰] ने एतेराज़ करने वालों का ये कहकर मुँह बंद कर दिया कि- ''बिलाल का 'सीन' अल्लाह के यहाँ 'शीन' ही है''। मालूम हुआ कि बड़ाई देखने से नहीं होती नियत की पाकीज़गी से होती है।

यही नफ़्स है जो इंसान को गुनाहों पर मजबूर करता है। इसे क़ुरआन मजीद ने नफ़्से अम्मारा कहा है। अगर ये नफ़्स न होता तो हम भी फ़रिश्ता बन जाते। फ़रिश्तों के यहाँ नफ़्स की चाहतें नहीं होतीं, इसी वजह से वह फ़रिश्ते बने हुए हैं। उनमें गुनाह करने की ताक़त हीं नहीं, उन्हें इबादतों और मानने से कोई ताक़त रोकने वाली ही नहीं, लेकिन इंसान में नफ़्स मौजूद है जो रुकावटें पैदा करता है। इसी वजह से हमारे नमाज़ पढ़ने और जिब्रील के नमाज़ पढ़ने में फ़र्क़ है। एक मोमिन जब सुबह की नमाज़ पढ़ने का इरादा करता है तो कितनी रुकावटें सामने आती हैं, कितनी ताक़तें उसे रोकती हैं, नींद रोकती है, सुबह की ठण्डी-ठण्डी हवा रोकती है, दिन भर की थकावट रोकती है, बिस्तर की आराम देने वाली गर्मी रोकती है, जब इतनी रुकावटों को पार करता है और इतने बंधनों को तोड़ता है तब जाकर कहीं वह सुबह की दो रकात नमाज़ अदा करता है, यानी जब नफ़्स को हरा देता है तब नमाज़ अदा होती है। इसी वजह से इंसान सबसे ऊँची पैदाईश है, क्योंकि ये ज़िद्दी नफ़्स न फ़रिश्तों में है और न जानवरों में। जब इंसान नफ़्स को हरा देता है, तब सब से ऊँची पैदाइश बनता है।

अगर कोई नफ़्स के मुक़ाबले में हार जाए और हारकर उसका गुलाम बन जाए तो दुनिया के सारे दरिन्दे दरिन्दगी में उसका मुक़ाबला नहीं कर सकते। दरिन्दा एक को मारता है, ये पूरी नस्ल को ख़त्म कर देगा। मुल्कों को बरबाद कर देगा। बड़े से बड़े दिखने वाले दुश्मन से मुक़ाबला आसान, मगर ख़ुद अपने नफ़्स से मुक़ाबला करना बहुत मुश्किल है। ज़ौक़ देहलवी का मशहूर शेर हैः

नहंग व अजदहा व शेरे नर मारा तो क्या मारा
बड़े मूज़ी को मारा नफ़्से अम्मारा को गर मारा

रसूल[स॰] ने सहाबा से सवाल कियाः बताओ तुम्हारा सबसे बड़ा दुश्मन कौन है? अलग-अलग जवाब मिले। जो हमें क़त्ल करने पर लगा हुआ हो, हमारी ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर ले, हम से मकान छीन ले, हमें नुक़सान पहुँचाए। फ़रमाया किसी इंसान को अपना सबसे बड़ा दुश्मन न समझना चाहिए, न किसी जानवर को, तुम्हारा सबसे बड़ा दुश्मन ख़ुद तुम्हारे साथ है और वह तुम्हारा नफ़्स है। बाहरी दुश्मन तुम्हारा घर जला सकता है, लूट सकता है, बरबाद कर सकता है, मगर तुम्हें जहन्नमी और लानती नहीं बना सकता। इंसान हक़ीक़त में नफ़्स और रूह का नाम है जबकि इंसान सारे इंतिज़ाम अपने जिस्म के लिए करता है। सारी कोशिशें जिस्म की आराम और आसानी के लिए और उसके मज़ों के लिए हैं। अपने को न पहचान कर इंसान ख़ुद अपने ऊपर ज़ुल्म करता है। अगर इंसान सिर्फ़ जिस्म है तो कुछ रुपयों से ज़्यादा उसकी क़ीमत नहीं है। एक जर्मन साइंसदान ने इंसान की कुल क़ीमत बताई 80 मार्क, 6 किलो चूना, 5 किलो लोहा, 2 किलो शकर, थोड़ा सा फ़ासफ़ोरस वग़ैरा। इस महंगाई में भी हिन्दुस्तानी करेंसी में डेढ़ दो हज़ार से ज़्यादा की क़ीमत न होगी। ये है इंसान की माद्दी क़ीमत। मशहूर है कि तैमूरलंग हम्माम में नहा रहा था मालिश और कीसा करने वाले से पूछा बताओ मेरी क्या क़ीमत होगी? उसने कहा सरकार 80

तूमान (ईरान का सिक्का) तैमूर ने कहा बेवक़ूफ़ 80 तूमान की तो मेरी लुंगी है। कीसा करने वाले ने जवाब दिया, हुज़ूर इसे जोड़ करके ही बता रहा हूँ।

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू), 12 अगस्त 2011ई०)

(2)

पिछले मज़मून से साबित हुआ कि असल इंसान रूह है न कि जिस्म। साइंसदानों की रिसर्च है कि इंसानी जिस्म अरबों सेल्स (Cells) से मिलकर बने हैं जो मुसलसल बदलते रहते हैं। पुराने सेल्स मुर्दा हो जाते हैं और उनकी जगह नये सेल्स ले लेते हैं। यह अमल बराबर जारी रहता है और साइंसदानों के मुताबिक़ तक़रीबन 10 सालों में इंसान का पूरा जिस्म बदल जाता है। इसका मतलब है कि दस साल पहले जो हमारे हाथ थे आज वह हाथ नहीं रहे। दस साल पहले जो हमारी ज़बान थी वह आज बदल चुकी है। तो अगर इंसान सिर्फ़ जिस्म होता तो जिस्म तो दस साल में बदल चुका है। इसलिए अगर हम ने किसी मुआहदे पर दस साल पहले दस्तख़त किए हैं तो अब हम यह कह सकते हैं कि हमारे यहवह हाथ ही नहीं रहे कि जिनसे मुआहदे पर दस्तख़त किए थे और अगर हम ने दस साल पहले किसी से ज़बानी वादा किया था तो हम कह सकते हैं कि अब वह ज़बान ही नहीं रही, जिस से वादा किया था। अगर हम इंसान को सिर्फ़ जिस्म मानें तो न कोई मुआहेदा ठीक हो होगा और न कोई वादा। वादों और मुआहदों को एतेबार रूह से मिलता है क्योंकि जिस्म बदल जाता है, मगर रूह नहीं बदलती।

जब यह हक़ीक़त साफ़ हो गई कि इंसान जिस्म और रूह से मिलकर बना है तो जिस तरह जिस्म की ज़रूरतें हैं, उसी तरह रूह के लिए भी है। अगर जिस्म के लिए लिबास है तो रूह के लिए भी। जैसे जिस्म बीमार हो जाता है, उसी तरह से रूह भी बीमार हो जाती है। अगर जिस्म के आज़ा हैं तो रूह के भी हैं। जिस्म की ग़िज़ा माद्दी खाने हैं और रूह की ग़िज़ा इल्म है। जिस्म को ग़िज़ाओं से ताक़त मिलती तो रूह को भूके रहने और रोज़े से ताक़त मिलती है। इमाम सादिक़[अ०] ने फ़रमाया, रूह की ज़िंदगी इल्म है और जाहिलियत मौत है, रूह की बीमारी शक है और उसकी सेहत यक़ीन है। रूह उस वक़्त सो रही होती है जब इंसान ग़फ़लत में हो और ग़फ़लत की गर्द रूह से छंट जाती है तो वह जाग जाती है। जिस्म का लिबास अगर अतलस और हरीर है तो रूह का लिबास तक़वा है इसी तरह से जिस्म की लज़्ज़त अलग है और रूह का मज़ा अलग है बल्कि यूँ कहा जाए कि जिन चीज़ों से रूह को मज़ा मिलता है वह जिस्म के लिए तकलीफ़ पहुँचाने वाली होती हैं और जो चीज़ें जिस्म को आराम और मज़ा देने वाली हैं, वह रूह को बेचैन कर देती हैं। जिस्म का मज़ा ख़ुद खाने में है और रूह का मज़ा दूसरों को खिलाने में है। जिस्म का मज़ा ख़ुद ख़ुशियाँ हासिल करने में है और रूह का मज़ा दूसरों को ख़ुशियाँ बाँटने में है। दूसरों की मदद करने में जिस्म को तकलीफ़ है, मगर रूह को आसानी है। हज़रत अली[अ०] अपनी ज़मीन पर काम कर रहे थे, हाथ में कुदाल थी। आप ने कुदाल जो मारी ज़मीन से पानी का फ़व्वारा निकला। अरब में पानी से बड़ी कोई नेमत नहीं। हर तरफ़ ख़ुशी की लहर दौड़ गई। लोग मौला अली को मुबारकबाद देने लगे। ऐ अली[अ०] आपकी ज़मीन की क़ीमत कई गुना हो गई। इस हाल में कि मौला के पैर पानी में घुटनों तक डूबे हुए थे, फ़रमाया क़लम-काग़ज़ लाओ। फ़ौरन फ़क़ीरों और मिस्कीनों के नाम अपनी पूरी ज़मीन वक़्फ़ फ़रमा दी। इसका नाम है रूह का मज़ा। जिस्म के मज़े की तलाश जानवरों की ख़ूबी है और रूह के मज़े की तलाश इंसानी ख़ूबी है।

बात को लम्बा न खींचते हुए कहना यह है कि कुछ फ़्लॉस्फ़र इस बात को मानते हैं कि नफ़्स और रूह एक ही चीज़ के दो नाम हैं और कुछ लोगों का कहना है कि दोनों अलग-अलग हैं इन दोनों के बीच हमेशा जंग चलती रहती है। एक अन्दुरूनी जंग (Inner War)

हमारे अंदर चलती रहती है। खुद हमारा वुजूद ही एक जंग का मैदान है, जिसमें नफ़्स और रूह में बराबर झगड़ा चलता रहता है। रूह कहती है ठीक काम करो, नफ़्स कहता है हमें क्या पड़ी है। दूसरे क्यों नहीं कर रहे हैं? एक अंधा आकर सड़क पार करना चाहता है तो उस वक़्त नफ़्स कहता है अगर मदद की तो जिस काम से जा रहे हो, उसमें देर हो जाएगी। सैकड़ों अंधे घूम रहे हैं तुम किस-किस की मदद करोगे? तो नफ़्स रोकता है, मगर जो ताक़त मदद के लिए तैयार करती है वह रूह है। नफ़्स को नेकी पसंद नहीं, रूह को गुनाह पसंद नहीं। इस आपसी जंग का नाम जेहादे अकबर है। मुसलमान लश्कर काफ़िरों से बड़ी लड़ाई जीतकर आ रहा था। रसूल[स०] ने फ़रमाया, तुम एक छोटी जंग से आ रहे हो और एक बड़ी जंग लड़ना है। मुसलमानों ने पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल[स०] क्या बहुत ही ताक़वर दुश्मन हमला करने वाला है? फ़रमाया, वह दुश्मन खुद तुम्हारा नफ़्स है।

क्योंकि समाज में फैलने वाली सारी ख़राबियों और बुराई की जड़ समाज के लोगों का गंदा हो जाना है, इसलिए क़ुरआन मजीद में नबियों के भेजे जाने का मक़सद भी नफ़्स को पाक करना ही बताया गया है। नफ़्स को पाक करने का सबसे अच्छा रास्ता रोज़ा है, क्योंकि दूसरी इबादतों में नियत और इरादे के साथ-साथ अमल भी है मगर रोज़ा सिर्फ़ नफ़्स की इबादत है, जिसमें सिर्फ़ इरादा है और बस। अगर इंसान सही मायने में रोज़ा रखने वाला हो। यानी सिर्फ़ फ़ाक़ा न हो बल्कि मुकम्मल रोज़ेदार हो तो उसे अपने नफ़्स पर पूरी तरह कंट्रोल हो जाता है। सामने तरह-तरह की नेमतें रखी हुई हैं, भूक की सख़्ती भी है, प्यास की तेज़ी भी है, कोई देखने वाला भी नहीं है। राज़ खुलने का ख़तरा भी नहीं, मगर अपने नफ़्सपर कंट्रोल रखता है कि कोई नहीं देख रहा है मगर फिर भी कोई है जो अब भी देख रहा है। जिंसी लज़्ज़तों से मज़ा ले सकता है, मगर जज़्बात के तूफ़ान पर अल्लाह की इताअत का बाँध बंध जाता है। गर्मी से बेहाल है, प्यास से निढाल है, सोचता है नहा लूँ, शायद प्यास की सख़्ती कम हो जाए, पानी में उतर जाता है। दिल चाहता है कि सर को डुबो लूँ ताकि गर्मी का एहसास ख़ुशी में बदल जाए, मगर अपने ऊपर कंट्रोल करता है। कोई सामने गालियाँ दे रहा है, बुरा-भला कह रहा है, दिल चाह रहा है कि ईंट का जवाब पत्थर से दूँ। उसने दस गालियाँ दीं हैं जवाब में सौ दूँ, लेकिन अपनी ज़बान पर क़ाबू रखता है, क्योंकि रोज़े से है। इस तरह धीरे-धीरे उसका नफ़्स बुराईयों से पाक और साफ़ होता चला जाता है। अगर समाज में हर इंसान ऐसा ही हो जाए तो समाज अपने आप जन्नत में बदल जाएगा। सारी ख़राबियों की जड़ इंसान का नफ़्स है। यही नफ़्स जब बेक़ाबू हो जाता है तो समाज में बुराई और ख़राबी की वजह बन जाता है और दुनिया में तबाहियाँ फैलती हैं, नस्ल काटी जाती है। आतंकवाद को बढ़ावा मिलता है और इंसान जनवरों से भी बदतर बन जाता है। यह जाहिल इंसान की नफ़्स की चाहते हैं, जो समाज की तबाही और बरबादी की वजह बनती हैं। रोज़े का बेहतरीन असर यह है कि उन जाहिली चाहतों पर लगाम लगा देता है। रसूल[स०] ने फ़रमाया, ''यह रोज़ा तुम्हारी चाहतों से तुम्हें बचाए रखता है।'' नफ़्स पर कंट्रोल ही का दूसरा नाम तक़वा है और रोज़े का फ़लसफ़ा क़ुरआन मजीद में यही बयान किया गया है, ''ताकि तुम तक़वे वाले बन जाओ'' जब समाज के लोगों में तक़वे की ख़ूबी पैदा हो जाएगी तो फिर न किसी के साथ नाइंसाफ़ी होगी न किसी का हक़ मारा जाएगा, न किसी पर ज़ुल्म और ज़्यादती होगी, बराबरी और इंसाफ़ का पाक और पाकीज़ा माहोल हो जाएगा और यहीं से रोज़े का मौज़ू मेरे मुसलसल मौज़ू इस्लाम और इंसानी हुक़ूक़ से जुड़ जाता है।

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू), 26 अगस्त 2011[ई०])

(जारी)